International Journal of Sociology and Humanities

**ISSN Print:** 2664-8679
**ISSN Online:** 2664-8687
**Impact Factor:** RJIF 8.33
IJSH 2025; 7(2): 183-191
www.sociologyjournal.net
Received: 17-08-2025
Accepted: 20-09-2025

**महेश कुमार पिन्टू**
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग ,
सामाजिक विज्ञान संकाय ,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय ,
मधेपुरा ,बिहार ,भारत

**Corresponding Author:**
**महेश कुमार पिन्टू**
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग ,
सामाजिक विज्ञान संकाय ,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय ,
मधेपुरा ,बिहार ,भारत

# समकालीन भारतीय संघवाद में निरंतरता और परिवर्तन: एक विश्लेषणात्मक अवलोकन

## महेश कुमार पिन्टू

**DOI:** https://www.doi.org/10.33545/26648679.2025.v7.i2c.194

**सारांश**

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-1 में कहा गया है कि इंडिया, यानी भारत, राज्यों का एक संघ है। संविधान सभा के सदस्यों के बीच इस बात पर काफी बहस हुई कि इसे राज्यों का संघ कहा जाए या संघ का राज्य। सही मायने में, भारत संयुक्त राज्य अमेरिका जैसा संघ नहीं है क्योंकि भारत राज्यों का एक अटूट संघ है और राज्यों को संघ से अलग होने का अधिकार नहीं है। इसके अलावा, राज्यों ने संघ में विलय के लिए किसी संधि पर हस्ताक्षर भी नहीं किए हैं। भारतीय संविधान, केंद्र और राज्य सरकारों के बीच संबंधों की संरचना से प्रेरणा लेते हुए, एक संघीय सरकार की परिकल्पना करता है जहाँ केंद्र और क्षेत्रीय सरकारों के बीच शक्तियों का विभाजन होता है। भारतीय संविधान का गहन अध्ययन करने वाले कई राजनीतिक विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि भारतीय संविधान एकात्मक पूर्वाग्रह के साथ संघीय है ताकि राष्ट्र की एकता और अखंडता को बनाए रखा जा सके। राजनीतिक विश्लेषक अक्सर भारतीय संघवाद को फेडरल सुई जेनेरिस कहते हैं। भारतीय संघवाद में कुछ एकात्मक विशेषताएं हैं राज्य में राज्यपाल की नियुक्ति केंद्र सरकार द्वारा की जाती है -, केंद्र सरकार सीमा को बदल सकती है, राज्यों का नाम बदल सकती है या अनुच्छेद 3 के तहत राज्यों के क्षेत्रों को बढ़ा या घटा सकती है, अखिल भारतीय सेवाओं की संस्था जहां केंद्र सरकार द्वारा प्रशिक्षित अधिकारी राज्य कैडर के तहत काम करते हैं, राज्य के राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति को संदर्भित किए जाने पर राज्य के कानूनों को अस्वीकार किया जा सकता है, अनुच्छेद-356 का अक्सर उपयोग किया जाता है, जो राज्य में राष्ट्रपति शासन है।

हालांकि समयसमय पर कई ताकतों ने भारतीय संघवाद को चुनौती दी है-, जैसे कि क्षेत्रवाद, राजकोषीय संघवाद का अभाव, जहां कर राजस्व का अधिकांश हिस्सा केंद्र सरकार के पास होता है, संघ सूची में राज्य सूची की तुलना में अधिक मदें हैं, भाषा और सांस्कृतिक संघर्ष मुख्य रूप से दक्षिणी राज्यों से संबंधित हैं, राज्यों का असमान आर्थिक विकास, विषम संघवाद के मुद्दे, राज्य का दर्जा और अलगाववादी आंदोलन आदि। इन चुनौतियों का समाधान सहकारी संघवाद द्वारा किया जा सकता है, जहाँ केंद्र और राज्य सरकारें मिलकर मुद्दों और उनके समाधान हेतु कार्यक्रमों पर काम करने के लिए सहयोग करती हैं। सहकारी संघवाद की भावना को आत्मसात करने वाली कुछ हालिया संस्थाएँ हैंनीति आयोग -, जीएसटी परिषद, अंतर-राज्यीय परिषद और क्षेत्रीय परिषदें। एक भारत", श्रेष्ठ भारत " करने के लिए सहकारी संघवाद के सार को सुनिश्चित की भावना महत्वपूर्ण है। संविधान )130वां संशोधनविधेयक एक मूलभूत प्रश्न को ( सामने ले आया है। भारत वास्तव में कितना संघीय है? संशोधन जो किसी भी मंत्री को – जिसमें मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री भी शामिल हैं – पद से स्वचालित रूप से हटाने का प्रयास करता है यदि उन्हें पांच या अधिक वर्षों की सजा वाले अपराध के लिए लगातार 30 दिनों तक हिरासत में रखा जाता है, सरकार के अनुसार, आपराधिक तत्वों की राजनीति को साफ करने के उद्देश्य से है। इरादा प्रशंसनीय हो सकता है, लेकिन इस परिवर्तन को लागू करने की प्रक्रिया भारत के संवैधानिक ढांचे में एक गहरे, संरचनात्मक असंतुलन को उजागर करती है, जो एक गहरे संघीय घाटे को उजागर करती है। संविधान में संशोधन करने की संसद की शक्ति अनुच्छेद-368 से निकलती है जो अधिकांश संशोधनों के लिए विशेष बहुमत निर्धारित करती है। हालाँकि, खंड )2) कुछ 'गंभीर' प्रावधानों की पहचान करता है जो संघीय ढांचे के लिए मौलिक हैं, जैसे राष्ट्रपति का चुनाव, संघ और राज्यों की कार्यकारी शक्ति की सीमा और संसद में राज्यों का प्रतिनिधित्व। देश में वर्तमान समय में आर्थिक संघवाद अभूतपूर्व चुनौतियों का सामना कर रहा है क्योंकि राज्यों को केंद्र से उचित वित्तीय सहायता नहीं मिल रही है। वर्तमान समय में संसाधनों का वितरण अन्यायपूर्ण है। संविधान सभा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण सुझाव देश और राज्यों के बीच वित्तीय संबंधों से संबंधित था। बी आर अंबेडकर जैसे संविधान निर्माताओं का मानना था कि राज्यों को अपनी कर शक्तियां दी जानी चाहिए और एक स्थिर संघ के लिए आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर राज्य आवश्यक हैं। संविधान में संघीय सिद्धांतों को ऐसी चर्चाओं के माध्यम से आकार दिया गया था। हालांकि, समय के साथ, केंद्र के पास वित्तीय शक्तियों को केंद्रित करने की कारवाई हुई है। पिछले एक दशक में, देश में ऐसी नीतियां प्रचलित रही हैं जो राज्यों के सर्वोत्तम हितों को पूरी तरह से कमजोर करती हैं। जीएसटी के कार्यान्वयन के साथ, राज्यों ने अपनी कर शक्तियां पूरी तरह से खो दी हैं। आज, राज्य केवल पेट्रोल, डीजल और शराब जैसे सीमित संसाधनों पर ही कर लगा सकते हैं। इसके अलावा, शासन को सुव्यवस्थित करने और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए और "एक राष्ट्र एक चुनाव" एक राष्ट्र", एक ध्वज और एक संविधान अलग प्रतिक्रियाएं प्राप्त-के विचार के सत्तारूढ़ दृष्टिकोण ने विभिन्न राज्यों से अलग "की हैं, जो भारत में संघवाद की जटिलताओं को दर्शाती हैं।

**कूटशब्द :**संविधान ,संघ सूची ,शक्तियों का विभाजन ,संघीय सिद्धांत ,संघवाद ,अर्ध ,संघवाद-केंद्रीयकरण ,आर्थिक संघवाद ,वित्तीय सहायता

## प्रस्तावना

'संघवाद' शब्द आधुनिक राष्ट्र राज्य प्रणाली में सरकार के दो-या अधिक स्तरों के बीच शक्तियों के संवैधानिक रूप से आवंटित वितरण को संदर्भित करता है एक -, राष्ट्रीय स्तर पर और दूसरा, प्रांतीय, राज्य या स्थानीय स्तर पर। सरकार के

संघीय रूप का सबसे प्रमुख पहलू यह है कि राष्ट्रीय और राज्य दोनों स्तरों पर सरकारें अपनेदूसरे से काफी स्वतंत्रता के साथ कार्य -अपने अधिकार क्षेत्र में एक-करती हैं। दुनिया की कुछ उल्लेखनीय संघीय राजनीतियाँ संयुक्त राज्य अमेरिका (यूएस), कनाडा, स्विट्जरलैंड, ऑस्ट्रेलिया और भारत हैं। 'संघ' शब्द का अर्थ समझने से संघीय राजनीति के व्यापक प्रकारों की जाँच करने का एक मार्ग मिलता है। 'संघ' लैटिन शब्द *फ़ोइडस से लिया गया है,* जिसका अर्थ संधि या समझौता है। इसलिए, एक संघ एक राजनीतिक व्यवस्था है जो अपनी विभिन्न घटक इकाइयों के बीच एक संधि या समझौते के माध्यम से बनती है। जब कुछ निकटवर्ती प्रांतीय इकाइयाँ स्वेच्छा से एक मजबूत संघ बनाने के लिए एक साथ आती हैं, तो एक संघ बनता है। अमेरिका 'राज्यों के संघ' का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। प्रांतीय इकाइयों के के इस मॉडल के अलावा "एक साथ आने", एक अन्य प्रकार का संघीय मॉडल भी है जहाँ भौगोलिक रूप से विशाल और सांस्कृतिक रूप से - विविध राज्य प्रशासनिक सुविधा और क्षेत्रीय हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए एक साथ रखने " अपने प्रांतों को स्वायत्तता प्रदान करता है। संघ के इस मॉडल को "वाला संघ कहा जाता है। भारतीय संघवाद को मोटे तौर पर दूसरे मॉडल के आधार पर तैयार किया गया है। भारतीय संविधान ने एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था निर्धारित की है जो प्रकृति में संघीय है अर्थात -, सरकार के दो स्तर हैं : राष्ट्रीय स्तर पर, और राज्य स्तर पर। हालाँकि, भारतीय संविधान ने संरचनात्मक रूप से केंद्र सरकार को राज्यों की तुलना में अधिक शक्तिशाली बना दिया है - ) का विरोधाभास प्रतीत होता है "केंद्रीकृत संघवाद" इसलिएभट्टाचार्य 2020, पृष्ठ संख्या-21(। राजनीतिक वैज्ञानिक फिलिप महवुड ने तर्क दिया है कि भारत जैसे सांस्कृतिक रूप से विविध, विकासशील देशों में संघवाद को केवल प्रशासनिक आवश्यकताओं के लिए नहीं बल्कि राष्ट्र के अस्तित्व के लिए चुना जाता है।

हालांकि, भारत की विशाल विविधताओं की बहुआयामी प्रकृति की गहरी समझ रखने के बावजूद, भारतीय संविधान के निर्माताओं ने देश की आजादी के समय भारत में पूरी तरह से संघीकृत राजनीतिक व्यवस्था बनाने से परहेज किया, क्योंकि उन्हें देश में और अधिक फूट और अलगाववादी प्रवृत्तियों के बढ़ने का डर था जो पहले से ही विभाजन के अधीन था। संविधान सभा की बहसों के दौरान, प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने चेतावनी दी थी कि एक कमज़ोर केंद्रीय सत्ता प्रदान करना देश के हितों के लिए हानिकारक होगा, जो शांति सुनिश्चित करने, साझा हितों के महत्वपूर्ण मामलों में समन्वय स्थापित करने और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में पूरे देश के लिए प्रभावी ढंग से बोलने में असमर्थ होगी हुमा)2015, पृष्ठ संख्या-793) । संविधान सभा के अन्य प्रमुख सदस्यों ने भी धर्म, भाषा, जाति और जातीयता पर आधारित भारत की विशाल विविधता को देखते हुए, भारत के अस्तित्व और राजनीतिक स्थिरता के लिए एक मज़बूत संघ सरकार की माँग की। हालाँकि, यह निष्कर्ष निकालना गलत है कि भारत का संवैधानिक ढाँचा पूरी तरह से केंद्र सरकार को राज्यों पर अधिकार देने की ओर झुका हुआ है। भारतीय संविधान में कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण संघीय विशेषताएँ मौजूद हैं। डॉबी आर . अंबेडकर ने संविधान सभा को आश्वस्त किया था कि संविधान एक संघीय संघ नहीं है और न ही राज्य संघ की ए संविधान है एवं संघ राज्यों काजेंसियाँ हैं, जो उससे शक्तियाँ प्राप्त करते हैं। संघ और राज्य दोनों संविधान द्वारा निर्मित हैं, दोनों ही संविधान से अपने अपने अधिकार प्राप्त करते हैं।-भारतीय संविधान में संघ सरकार के लिए एक अंतर्निहित पूर्वाग्रह है, और यह भारत की राजनीतिक संरचना पर हावी हैकेंद्र सरकार विभिन्न तरीकों से राज्यों से बेहतर प्राधिकारी है। वास्तव : में, 'फेडरेशन' शब्द का देश के मौलिक कानून में कोई उल्लेख नहीं है। अनुच्छेद-1 भारत को 'राज्यों का संघ' के रूप में वर्णित करता है, न कि 'राज्यों का संघ', दो कारणों से, जैसा कि अंबेडकर ने व्यक्त किया है। पहला, भारत में संघ का गठन उस समय नहीं हुआ था, क्योंकि संघीय राज्यों के बीच एक समझौते के कारण; और दूसरा, भारत में राज्यों को अलग होने का अधिकार नहीं है। इसलिए, भारत के मामले में संघ को 'संघ' कहा जाता है क्योंकि यह अविनाशी है। ऑस्ट्रेलियाई संवैधानिक विशेषज्ञ केसी व्हेयर ने भारत के संविधान को के रूप में "संघीय-अर्ध" वर्णित किया था (बोस 2023 ,पृष्ठ संख्या-8।(

संघवाद एक ऐसी शासन प्रणाली है जिसमें शक्तियों का बँटवारा दो या दो से अधिक स्तरों , जैसे केंद्र और राज्यों या प्रांतों के बीच होता है। संघवाद एक बड़ी राजनीतिक इकाई के भीतर विविधता और क्षेत्रीय स्वायत्तता को समायोजित करने की अनुमति देता है। भारतीय संविधान कुछ एकात्मक विशेषताओं वाली एक संघीय व्यवस्था स्थापित करता है। इसे कभी संघीय व्यवस्था भी कहा-कभी अर्ध-जाता है, क्योंकि इसमें संघ और महासंघ दोनों के तत्व समाहित हैं। संविधान केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच विधायी, प्रशासनिक और कार्यकारी शक्तियों के वितरण को निर्दिष्ट करता है। विधायी शक्तियों को संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची में वर्गीकृत किया गया है, जो केंद्र सरकार, राज्य सरकारों को प्रदत्त शक्तियों और उनके बीच साझा की गई शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। संविधान राजनीतिक शक्ति वितरण के विविध तरीकों के साथ एक बहुस्तरीय या बहुस्तरीय संघ की स्थापना का भी प्रावधान करता है। भारतीय संघवाद अपने संदर्भ में अद्वितीय है, क्योंकि यह ब्रिटिश शासन के अधीन एकात्मक प्रणाली से स्वतंत्रता के बाद संघीय प्रणाली में विकसित हुआ है।

भारतीय संघवाद को समय के साथ कई चुनौतियों और समस्याओं का सामना करना पड़ा है , जैसे रियासतों का एकीकरण, राज्यों का भाषाई पुनर्गठन, क्षेत्रीय आंदोलन और स्वायत्तता की मांग, केंद्रराज्य संबंध और संघर्ष-, राजकोषीय संघवाद और संसाधनों का बंटवारा, सहकारी संघवाद और अंतरराज्यीय समन्वय - आदि। भारतीय संविधान का अनुच्छेद-368 संविधान संशोधन की शक्ति और प्रक्रिया को रेखांकित करता है। यह अनुच्छेद 368(2) के अंतर्गत एक सामान्य प्रक्रिया का निर्माण करता है, जिसके लिए केवल संसद में विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है, और अनुच्छेद 368(2) के प्रावधान के अंतर्गत एक दूसरी अधिक कठिन प्रक्रिया, जिसके लिए संसद में विशेष बहुमत और कम से कम आधे राज्यों के अनुमोदन की आवश्यकता होती है। यह दूसरी प्रक्रिया उन प्रावधानों के लिए आरक्षित है जिन्हें संविधान सभा ने संघ और राज्यों की प्रशासनिक", विधायी, वित्तीय और अन्य शक्तियों से संबंधित संघीय प्रावधान " माना था। इन प्रावधानों के लिए अधिक भार लगाने के पीछे तर्क यह था कि राज्यों और संघ के बीच शक्ति संतुलन को बदलने के उद्देश्य से संशोधनों पर बहस में राज्यों को अपनी बात रखने का अवसर देकर संघवाद के मूल सिद्धांत की रक्षा की जा सके खान और पाल)2012, पृष्ठ संख्या-52)।

मूल रूप से, भारत ने एक संघीय राजनीतिक व्यवस्था अपनाई थी जिसमें सरकार के दो स्तर थेराष : ट्रीय स्तर और राज्य स्तर। 1992 में 73वें और 74वें संशोधनों के लागू होने के बाद एक महत्वपूर्ण तीसरा स्तर पंचायतों और नगर पालिकाओं ) जोड़ा गया। (के स्तर पर संविधान निर्माताओं ने स्वतंत्र भारत के लिए संघीय ढाँचे का एक अनूठा मॉडल अपनाया, जिसे अक्सर 'केंद्रीकृत संघवाद' कहा जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि संयुक्त राज्य अमेरिका या कनाडा जैसे शास्त्रीय (यूएस) संघवाद के विपरीत, कई प्रमुख क्षेत्रों में संरचनात्मक रूप से अधिक शक्तिशाली संघ सरकार के लिए संविधान अनिवार्य है। एक मज़बूत केंद्र बनाने के संस्थापकों के निर्णय का श्रेय उस देश में बढ़ती अलगाववादी प्रवृत्तियों के डर को दिया जाता है, जिसने स्वतंत्रता के दौरान विभाजन की दर्दनाक विरासत को झेला था। राज्यों की सीमाओं के पुनर्निर्माण के विवेकाधिकार जैसे महत्वपूर्ण मामलों में केंद्र सरकार को राज्यों के मुकाबले बेहतर शक्तियाँ प्राप्त हैं। संघ सूची में राज्य सूची की तुलना में अधिक विषय शामिल हैं और समवर्ती सूची के विषयों पर भी इसका कानून राज्यों पर लागू होता है। इसके अलावा, संसद असाधारण परिस्थितियों में किसी भी राज्य के विषय पर कानून बना सकती है, महत्वपूर्ण बात यह है कि केंद्र को आर्थिक संसाधनों पर व्यापक नियंत्रण प्राप्त है और सबसे विवादास्पद रूप से, केंद्र के पास राज्यों में राज्यपालों को नियुक्त करने की शक्ति है और यदि केंद्र उचित समझे तो राष्ट्रपति शासन की घोषणा करके राज्य सरकारों को भंग कर सकता है। हालांकि, यह मान लेना गलत होगा कि भारत की संघीय व्यवस्था पूरी तरह से केंद्र की ओर झुकी हुई है। भारत की राजनीतिक व्यवस्था में कुछ प्रमुख मजबूत संघीय विशेषताएं हैं जैसे कि दोहरी राजनीति और लिखित संविधान में केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का सीमांकित क्षेत्राधिकार (रेड्डी 2018 ,पृष्ठ संख्या-34। इसके अलावा(, संविधान के संघीय प्रावधानों की संशोधन प्रक्रिया

कठोर है जो केवल राज्यों के बहुमत की सहमति से ही संभव है। एक स्वतंत्र न्यायपालिका जैसी संस्थागत सुरक्षा।

संघवाद विविधताओं वाले देश को एक सूत्र में बाँधे रखने के लिए गोंद का काम करता है। विभिन्न राष्ट्रों में जीवित रहने के लिए अपनी अपनी क्षमताएँ होती हैं।- भारतीय संविधान कहता है कि भारत राज्यों का एक संघ है। 26 नवंबर 1949 को संविधान सभा द्वारा अपनाए गए संविधान में एक मज़बूत केंद्र की परिकल्पना की गई थी। उस समय, संविधान निर्माताओं की सर्वोच्च चिंता भारत की एकता और अखंडता की रक्षा थी। संविधान का मसौदा पेश करते हुए, भारतीय संविधान के निर्माता, डॉशब्द का "संघ" भीमराव अंबेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि . प्रयोग जानबूझकर किया गया था, क्योंकि यह एक ऐसी भावना को व्यक्त करता है जो अविनाशी है। प्रारूप समिति यह स्पष्ट करना चाहती थी कि यद्यपि भारत एक संघ होगा, यह राज्यों के बीच किसी समझौते का परिणाम नहीं है। भारत, जो सामान्य समय में एक संघीय शासन व्यवस्था के रूप में कार्य करता है, आपातकाल के दौरान एकात्मक राज्य में परिवर्तित हो सकता है। वास्तव में, भारतीय राज्य को विभिन्न रूपों में वर्णित किया गया हैसंघवाद रहित एक संघ :; संघवाद के किसी न किसी रूप से आच्छादित एक शासन व्यवस्था सहकारी -, कार्यकारी, आकस्मिक, उत्तरदायी, संसदीय, लोकलुभावन, विधायी, प्रतिस्पर्धी, राजकोषीय, पुनर्गठित, अनिच्छुक, इत्यादि भट्टाचार्य)2007, पृष्ठ संख्या-29)। यहाँ यह स्मरणीय है कि के व्हेयर पहले .सी.राजनीतिशास्त्री थे जिन्होंने भारतीय संविधान को अर्धसंघीय बताया था। उन्होंने कहा-, "भारतीय गणराज्य का संविधान केवल अर्धके रूप में और इसे संघीय संविधान के उदाहरण "संघीय है- नहीं माना जा सकता। यह पिछली सदी के50 के दशक की बात है। जैसेजैसे - भारतीय राजनीति और सरकार एकात्मक राज्य के रूप में कार्य करने लगी, यह महसूस किया गया कि केवल एक संघीय ढांचे के तहत ही पूरे देश की अनूठी सामाजिकसांस्कृतिक विविधताओं को-, और विशेष रूप से राज्यों को एक राष्ट्र के रूप में एक साथ रखा जा सकता है।

भारत के बहुलवादी समाज के बहुआयामी आयामों को देखते हुए, केवल संघीय सिद्धांत ही एक सुदृढ़ और एकीकृत भारतीय राज्य के निर्माण हेतु एक व्यवहार्य आधार प्रदान कर सकता है। इसलिए, केंद्र और राज्यों के साथसाथ राज्य और - निचले स्तरों के बीच संबंधों को बेहतर बनाने हेतु संस्थागत व्यवस्थाओं की खोज जारी थी। भारत के लिए एक उपयुक्त संघीय व्यवस्था का चयन संबंधित बुद्धिजीवियों, न्यायिक और कानूनी विशेषज्ञों, सामाजिक विचारकों और राजनीतिक दलों के एजेंडे में सबसे ऊपर था। 1980 के दशक के उत्तरार्ध तक यह महसूस किया जाने लगा था कि संघीय विचार का विस्तार उपराज्य स्तर पर- विकेंद्रीकरण पर निर्भर करता है। 73वें और 74वें संविधान संशोधनों ने सहभागी लोकतंत्र और जनाधार को गाँवों और नगर पालिकाओं तक विस्तारित किया, जिन्हें स्वतंत्रता के बाद एक महत्वपूर्ण मोड़ माना जा सकता है, जो एक संघीय शासन व्यवस्था की सामाजिक वास्तविकताओं को दर्शाता है (जाफ़रलॉट और वर्नियर्स 2020, पृष्ठ संख्या-145)। इसलिए भारत एक विकासशील ''संघीय राष्ट्र'' है। ग्राम परिषदों और नगर पालिकाओं को संविधान के भागIX के अंतर्गत लाकर, भारत अपनी विविधता को समायोजित करने और अपनी जनता की आकांक्षाओं को मूर्त रूप देने के लिए बहुस्तरीय संघवाद की ओर अग्रसर हुआ है। राजनीतिक विश्लेषक बलवीर अरोड़ा और निर्मल मुखर्जी ने उभरते भारतीय परिदृश्य के लिए बहुस्तरीय संघवाद की अवधारणा को प्रतिपादित किया है। उनका मानना है कि विशाल संघीय व्यवस्थाओं में राजनीतिक और '' एकीकरण व '' और ''विकासात्मक प्रक्रियाओं में भागीदारी के लिए बढ़ते दबाव के परिणामस्वरूप संरचनाओं की बहुस्तरीयता ''विभेदीकरण के समवर्ती दबाव होती है।

भारत एक ऐसे बिंदु पर पहुँच गया था जहाँ यह अपरिहार्य हो गया था कि लिए बिना संघ का ''राजनीतिक वास्तविकताओं की परतों का संज्ञान-सामाजिक'' अस्तित्व नहीं रह सकता था। भारत में बहुस्तरीय व्यवस्था, लोकतांत्रिक विकास द्वारा उत्पन्न दबाव के अनुकूलन के नए तरीकों की नई और सतत खोज है, जिसे संघीय व्यवस्था को और अधिक उत्तरदायी बनाने के लिए डिज़ाइन किया गया है। भारत द्विसे बहुस्तरीय संघवाद की ओर बढ़ रहा है (संघ और राज्य) स्तरीय संघ-, ज़िले और उससे नीचे के स्थानीय निकायों (ग्राम परिषदों और नगर पालिकाओं) के तीसरे स्तर पर आने से, राष्ट्र एक व्यापक संघवाद; संघों का संघ बन गया है। यहाँ यह स्मरणीय है कि भारत के संविधान के अनुसार, क्षेत्रों की विशिष्ट माँगों को पूरा करने के लिए भारत में जीवंत स्वायत्त परिषदें हैं। इस बहुस्तरीय संघवाद को एक संरचनात्मक साधन के रूप में देखा जाना चाहिए जिसके माध्यम से केंद्र से ग्राम परिषदों तक स्वशासन पहुँचता है )अय्यर और टिलिन 2020, पृष्ठ संख्या-124)। ऐसी योजना में स्थानीय स्वशासी इकाइयाँ जमीनी स्तर की राजनीतिक और लोकतांत्रिक प्रक्रिया के साथसाथ प्रभावी जनभागीदारी से पोषण प्राप्त - विस्तार भारतीय राजनीति के संघीकरण की करेंगी। यद्यपि राजनीतिक आधार का दिशा में शायद सबसे महत्वपूर्ण कदम है, फिर भी कई ऐसे विकास हुए हैं जिन्होंने भारतीय संघीय व्यवस्था को बदल दिया है। भारत में दलीय व्यवस्था एक प्रमुख दलीय व्यवस्था से बहुदलीय व्यवस्था में आमूलकी चूल परिवर्तन से गुज़री है। इस- शुरुआत1977 में हुई जब राजनीतिक आपातकाल के दौरान हुए चुनावों में कांग्रेस पार्टी केंद्र में पहली बार हार गई। 1996 से, भारत में लगातार गठबंधन सरकारों का शासन रहा है। संसद में एकदलीय बहुमत पर आधारित मज़बूत केंद्र सरकारों ने गठबंधन सरकारों को राज्य स्तरीय आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए प्रेरित किया है। भारत जैसे देश में गठबंधन के फायदे सबके सामने हैं। गठबंधन सरकारों ने संघीय इकाइयों को वज़न और आवाज़ दी है। गठबंधन उग्रवाद को भी कमज़ोर करते हैं। मुझे यहाँ यह कहना होगा कि गठबंधनों की अपनी अंतर्निहित कमज़ोरियाँ भी हैं। जैसा कि कहा जाता है, गठबंधन एक''विवाह की तरह है जहाँ ईर्ष्या प्रेम से ज़्यादा महत्वपूर्ण है।''

संघवाद की बदौलत, भारत के राज्य राजनीतिक और आर्थिक रूप से अपनी आवाज़ बुलंद कर रहे हैं और अपनी बात को महसूस कर रहे हैं, जितना उन्होंने भारत की आज़ादी के बाद के 55 वर्षों में पहले कभी नहीं सुना था (एडेनी और भट्टाचार्य 2020, पृष्ठ संख्या-415), । यह कहना ग़लत होगा कि भारत की केंद्र सरकार लुप्त हो रही है। न ही संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार, जिसने 9/11 की त्रासदी के बाद पहले से कहीं ज़्यादा शक्तियाँ ग्रहण की हैं और उनका प्रयोग किया है। आज, केंद्र अब एक हस्तक्षेपकर्ता नहीं है; अब वह एक नियामक के रूप में कार्य करता है। जहाँ तक भारत की सांस्कृतिक और भाषाई विविधताओं का प्रश्न है, हमने भाषाई राज्यों के निर्माण द्वारा उनका भलीभांति प्रबंधन किया है। जन - साथ-पूर्ति के साथ आकांक्षाओं की, इस कदम ने भारतीय संघवाद को भी सुदृढ़ किया है। यदि कभीकभी केंद्र और राज्य टकराव की राह पर दिखाई देते हैं-, तो यह प्राथमिकताओं के क्रम के विभिन्न अनुमानों के बीच की खाई का परिणाम है, एक समावेशन पर ज़ोर देता है तो दूसरा क्षेत्रीय पहचानों के संरक्षण की माँग करता है, एक राष्ट्रीय सुरक्षा के बारे में सोचता है तो दूसरा अज्ञात भय से ग्रस्त रहता है।

## भारतीय संविधान में संघवाद

स्वतंत्रता के समय, भारतीय संविधान के निर्माताओं ने माना कि भारत जैसे विशाल क्षेत्रीय और सांस्कृतिक रूप से विविध देश में, संघवाद न केवल प्रशासनिक उद्देश्यों के लिए बल्कि राष्ट्र के अस्तित्व के लिए भी आवश्यक था। इस प्रकार, वे एक मजबूत और एकजुट राष्ट्र बनाने के लिए संघवाद को एक साधन के रूप में चाहते थे। हालांकि, साथ ही, इस बात को लेकर चिंतित थे कि नव स्वतंत्र देश फूट और अलगाववादी प्रवृत्तियों के कारण बिखर न जाए, इसलिए उन्होंने पूरी तरह से संघीय व्यवस्था बनाने से परहेज किया )कुमार 2024 ,पृष्ठ संख्या-355), । देश के हालिया विभाजन से यह विश्वास और मजबूत हुआ। इसलिए, भविष्य में ऐसी किसी भी आकस्मिकता के लिए पर्याप्त सावधानी बरतनी पड़ी। यह एक मजबूत केंद्रीय सरकार के द्वारा किया गया था। संविधान सभा की बहसों के दौरान, जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि एक कमजोर केंद्रीय " प्राधिकरण प्रदान करना देश के हितों के लिए हानिकारक होगा जो शांति सुनिश्चित करने, सामान्य चिंता के महत्वपूर्ण मामलों में समन्वय करने और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में पूरे देश के लिए प्रभावी ढंग से बोलने में असमर्थ होगा। जबकि केंद्र को राज्यों की तुलना में बड़ी भूमिका सौंपी गई थी, इसने संविधान के संघीय चरित्र को कम

नहीं किया। संघवाद का मूल सिद्धांत यह है कि विधायी और कार्यकारी प्राधिकरण केंद्र और राज्यों के बीच विभाजित होते हैं, साधारण कानून के माध्यम से नहीं, बल्कि संविधान जैसे कुछ अधिक स्थायी द्वारा। भारतीय संविधान यही करता है। सामान्य परिस्थितियों में, राज्य केंद्र पर निर्भर नहीं होते हैं और केंद्र उनके डोमेन में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। डॉ बी आर अंबेडकर ने संविधान की संघीय प्रकृति के बारे में संविधान सभा को आश्वस्त करते हुए कहा था "संविधान एक संघीय संविधान है… संघ राज्यों का एक संघ नहीं है… न ही राज्य संघ की एजेंसियां हैं, जो इससे शक्तियां प्राप्त करते हैं। संघ और राज्य दोनों संविधान द्वारा बनाए गए हैं। इस प्रकार, भारत पर शासन करने के लिए, एक अर्धसंघीय संरचना को अपनाया - गया।

भारत का संविधान देश का सर्वोच्च कानून है जो न केवल देश में प्रचलित प्रशासन की प्रकृति और स्वरूप को निर्धारित करता है, बल्कि संप्रभुता के अंतिम स्रोत को भी व्यक्त करता है। भारतीय संविधान की कठोर प्रकृति इसके प्रावधानों, जिनमें संघीय सरकार और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन शामिल है, से विचलित होना कठिन बनाती है (बागची 2003, पृष्ठ संख्या-32), । संघवाद के अस्तित्व के लिए एक लिखित संविधान आवश्यक है। इसी कारण से, संघवाद भारतीय संविधान का मूल ढाँचा है। राज्य सभा में सीटों का आवंटन भारतीय संविधान की चौथी अनुसूची द्वारा नियंत्रित होता है। सीटों का यह आवंटन प्रत्येक राज्य की जनसंख्या के आधार पर होता है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि राज्यों को राष्ट्रीय स्तर पर आवाज़ और प्रतिनिधित्व मिले। यह प्रतिनिधित्व राज्यों को संघीय विधायी स्तर पर अपने मुद्दों, विचारों और चिंताओं को व्यक्त करने में सक्षम बनाकर केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच सहयोग को बढ़ावा देता है।

भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची राष्ट्र के सहकारी संघवाद के लिए महत्वपूर्ण है, जो केंद्र और राज्य सरकारों के बीच एक स्थिर संबंध को दर्शाती है जो उन्हें साझा हितों के मुद्दों पर मिलकर काम करने की अनुमति देती है। विशेष रूप से समवर्ती सूची, जो उन मुद्दों को संबोधित करती है जिन पर केंद्र और राज्य दोनों सरकारें कानून पारित कर सकती हैं, केंद्र और राज्य सरकारों के बीच सहयोग को बढ़ावा देती है। वे मिलकर काम कर सकते हैं, संसाधनों को साझा कर सकते हैं और पूरे देश को प्रभावित करने वाले मुद्दों, जैसे आपराधिक कानून, विवाह, पर्यावरण, शिक्षा और दिवालियापन, के समाधान के लिए अपने प्रयासों का समन्वय कर सकते हैं। संविधान का अनुच्छेद-54, राष्ट्रपति के चुनाव से संबंधित है। राज्य के प्रमुख के रूप में, यह केंद्र और राज्य सरकारों के बीच संतुलन बनाने में एक प्रभावी भूमिका निभाता है, जो सहकारी संघवाद के प्रभावी संचालन के लिए आवश्यक है। भारत के राष्ट्रपति, सहकारी संघवाद के एक प्रभावी मध्यस्थ के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, विशेष रूप से उन परिस्थितियों से निपटने के संबंध में जिनके परिणामस्वरूप भारतीय संविधान के अनुच्छेद-356 के अनुसार राष्ट्रपति शासन लागू हो सकता है )सिंह 2018, पृष्ठ संख्या-115(।

अनुच्छेद-262 अंतरराज्यीय जल विवादों के समाधान हेतु एक कानूनी ढाँचा स्थापित करता है, इसलिए सहकारी संघवाद को बढ़ावा देने के लिए यह अपरिहार्य है। सहकारी संघवाद को बढ़ावा देने में केंद्र सरकार और न्यायपालिका का कार्य, बातचीत को सुगम बनाने और यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि निर्णयों का क्रियान्वयन हो, यहाँ तक कि कावेरी नदी जल विवाद जैसे विवादास्पद मुद्दों पर भी। अनुच्छेद 263 राज्यों और केंद्र के बीच समन्वय को प्रोत्साहित करने हेतु एक संवैधानिक संस्था, अंतरराज्यीय परिषद की स्थापना का - ) न करता है। सरकारिया आयोगप्रावधा1983) ने सहकारी संघवाद को बढ़ावा देने हेतु अंतरराज्यीय परिषद की भूमिका और कार्यप्रणाली को सुदृढ़ करने हेतु - सिफारिशें की थीं। इसने सुझाव दिया था कि बैठकों के एजेंडे में उन विषयों को की सहमति हो और शामिल किया जाना चाहिए जिन पर राज्य और केंद्र दोनों जिनमें उनकी रुचि हो।

73वां और 74वां संशोधन अधिनियम संशोधन अधिनियमों ने भारतीय संविधान में 11वीं और 12वीं अनुसूचियाँ जोड़ीं और इनका मुख्य उद्देश्य त्रिस्तरीय सरकारों, अर्थात् पंचायतों और नगर पालिकाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान करना है। इसलिए, ये ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में स्थानीय स्वशासन और प्रशासन को अधिक अधिकार और ज़िम्मेदारियाँ देकर सहकारी संघवाद को मज़बूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संशोधन स्थानीय स्तर पर विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने और उन्हें लागू करने तथा समुदायों की ज़रूरतों को पूरा करने में मिलकर काम करते हैं। यह माननीय सर्वोच्च न्यायालय का एक महत्वपूर्ण निर्णय था जिसने भारतीय संविधान के मूल ढांचे के एक अंग के रूप में संघवाद के महत्व पर बल दिया। इस निर्णय में केंद्र और राज्य सरकारों के प्राधिकारियों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने के महत्व को बरकरार रखा गया। जीएसटी को 101वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2017 द्वारा शामिल किया गया थानीति ) आयोग2024 ,पृष्ठ संख्या-2 ,(। जीएसटी कराधान प्रणाली में सहकारी संघवाद का एक आदर्श उदाहरण है। यह केंद्र और राज्य सरकारों को एक एकीकृत कर प्रणाली बनाने, बहुविध कराधान को कम करने, राजस्व बंटवारे को आसान बनाने और आम सहमति के आधार पर निर्णय लेने के लिए एक साथ लाता है।

दिल्ली उच्च न्यायालय ने अपने एक फ़ैसले में कहा कि संघवाद भारतीय संविधान के मूल ढांचे का एक हिस्सा है और इसे केवल ' केंद्र सरकार ' शब्द के इस्तेमाल से कमज़ोर नहीं किया जा सकता। दिल्ली उच्च न्यायालय के कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश मनमोहन और न्यायमूर्ति मिनी पुष्करणा की खंडपीठ ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि कानूनों और आधिकारिक संचार में 'केंद्र सरकार' शब्द के इस्तेमाल से यह गलत धारणा बनती है कि राज्य सरकारें केंद्र सरकार के अधीन है (अब्ज़र्वर रीसर्च फ़ाउंडेशन 2024, पृष्ठ संख्या-1), । संघवाद, जो हमारे संविधान का मूल ढांचा है, को 'केंद्र सरकार' शब्द के इस्तेमाल से किसी भी तरह से कमजोर या उल्लंघन करने वाला नहीं कहा जा सकता। हमारे संविधान का मूल ढांचा ही वह आधार है जिस पर हमारे देश का शासन टिका हुआ है। भारत के संविधान के अनुच्छेद-1 में 'संघ और उसका क्षेत्र' शब्दों का प्रयोग किया गया है और कहा गया है कि 'इंडिया, अर्थात् भारत, राज्यों का संघ होगा।' दिलचस्प बात यह है कि संविधान के 22 भागों में विभाजित 395 अनुच्छेदों और या आठ अनुसूचियों में से किसी में भी/'केंद्र' या 'केंद्र सरकार' शब्दों का जानबूझकर प्रयोग नहीं किया गया है।

न्यायालय ने इस बात पर ज़ोर दिया कि 'केंद्र सरकार', 'भारत संघ' और 'भारत सरकार' जैसे विभिन्न शब्दों का परस्पर प्रयोग किया गया है और इसका अर्थ यह नहीं है कि राज्य सरकारें केंद्र सरकार के अधीन हैं। राजस्व बंटवारे समेत कई मुद्दों पर केंद्र और विपक्षी दलों द्वारा शासित राज्यों के बीच लगातार तनाव के बीच, सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश डीहा है चंद्रचूड़ ने क .वाई. कि सहकारी संघवाद की अवधारणा , जो भारत के लोकतांत्रिक शासन के मूल में है, राज्यों को केंद्र की नीति के अनुसार चलने के लिए बाध्य नहीं करतीनीति ) आयोग2024 ,पृष्ठ संख्या-1 ,(। संघवाद कोई एकात्मक अवधारणा नहीं है, बल्कि बहुआयामी है, और इन पहलुओं में अनगिनत अवधारणाएँ हैं। उन्होंने कहा कि 1977 में, सर्वोच्च न्यायालय ने पहली बार फैसला दिया था कि भारत का संघवाद मॉडल मुख्यतः सहकारी है, जहाँ राज्य और केंद्र विकास के साझा लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विचारविमर्श के माध्यम से अपने मतभेदों क-ो दूर करते हैं। 2022 के भारत संघ बनाम मोहित मिनरल्स मामले में अपने ही फैसले का हवाला देते हुए, तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश डीचंद्रचूड़ ने कहा .वाई., "यह ज़रूरी नहीं है कि राज्यों और केंद्र के बीच 'सहयोग' ही संघीय सिद्धांतों को बनाए रखने का एकमात्र तरीका हो।

भारतीय संघवाद को एक संवाद के रूप में देखना ज़रूरी है जिसमें राज्य और केंद्र आपस में बातचीत करते हैं। जिस तरह हम रोज़मर्रा की बातचीत में शामिल होते हैं, वह या तो सहज हो सकती है या दोनों इकाइयों के बीच टकराव पैदा कर सकती है। सहकारी संघवाद द्वारा पोषित सहयोगात्मक चर्चाएँ एक सीमा के अंत में हैं और दूसरी ओर, अंतर्विरोधी प्रतिद्वंद्विताएँ। संघवाद के फलनेफूलने के लिए - दोनों प्रकार के संवाद समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। इसलिए संघवाद केवल सुविधाजनक परिणामों की ओर ही नहीं ले जाता, बल्कि कुछ प्रतिद्वंद्विता का भी समान रूप से स्वागत करता है। भारत वर्तमान में जिस ' असममित संघवाद ' का अनुभव कर रहा है, उसे दो स्तरों पर समझा जा सकता है- एक, केंद्र और राज्य

अपनेअपने क्षेत्रों में स्वतंत्र हैं-; और दूसरा, प्रत्येक राज्य का केंद्र के साथ अद्वितीय असममित संबंध (घोष 2022, पृष्ठ संख्या-5)। हमारे जैसे विविधतापूर्ण और बहुल राष्ट्र में, सभी राज्यों को एक ही दायरे में रखकर संघ के संदर्भ में उनके साथ एक जैसा व्यवहार करना असंभव है। विभिन्न राज्यों का संवैधानिक एकीकरण करके 'भारत' राष्ट्र का निर्माण, यदि कुछ भी हो, तो प्रत्येक राज्य के एकीकरण के लिए विशिष्ट विचारों को दर्शाता है। भारत में संघवाद के विकास में न्यायिक योगदान का उल्लेख करते हुए, तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश डीचंद्रचूड़ ने प्रसिद्ध .वाई. एसआर बोम्मई फैसले का हवाला दिया, जिसने राज्यपाल की वीटो शक्ति को कुंद कर दिया था, जिन्हें अब सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विधेयकों को शीघ्रता से पारित करने के लिए कहा जा रहा है एक ऐसी स्थिति जिसका राज्यों के पास पहले कोई - उपाय नहीं था।

**विकसित होते संघवाद**

केंद्र और राज्यों के बीच संबंध बदलते समय के साथ विकसित हुए हैं और विभिन्न अवधियों में राजनीतिक विमर्श के परिवर्तन पर काफी हद तक निर्भर रहे हैं। भारत का संघवाद शुरू से ही केंद्र और राज्य स्तर पर राजनीतिक अभिनेताओं के बीच जटिल अंतःक्रिया द्वारा आकार दिया गया है, जो राजनीतिक पक्षपात के साथसाथ पहचान और संसाधनों की राजनीति जैसे अतिव्यापी निर्धारकों पर - आधारित है। भारतीय संघवाद की गतिशीलता को स्वतंत्रता से लेकर वर्तमान समय तक चार चरणों में वर्गीकृत किया जा सकता है जो एक दलीय संघवाद )1952-1967); क्षेत्रीय केंद्रित संघवाद )1967-1989); बहुदलीय संघवाद )1989-2014); और राष्ट्रीय पार्टी संघवाद की वापसी )2014 से वर्तमान तक ( हैं।

पहले चरण में, स्वतंत्रता की पार्टी के रूप में, कांग्रेस पार्टी ने केंद्र और राज्यों दोनों में पूर्ण राजनीतिक आधिपत्य का आनंद लिया, जिसने राजनीतिक वैज्ञानिक रजनी कोठारी को इसे ' कांग्रेस प्रणाली' कहने के लिए प्रेरित किया । इस अवधि के दौरान, हालांकि राष्ट्रीय राजनीति में पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का वर्चस्व था, लेकिन कांग्रेस के क्षेत्रीय नेताओं और मुख्यमंत्रियों का भी राज्यों में काफी राजनीतिक दबदबा और समर्थन आधार था। केंद्र और राज्यों के बीच प्रमुख मतभेदों को कांग्रेस पार्टी के मंचों पर सुलझाया गया, जिससे किसी भी बड़े संघीय संघर्ष को रोका जा सके, जिससे 'आंतरिकपार्टी संघवाद-' का एक सर्वसम्मत मॉडल तैयार हुआ । कुछ प्रमुख अपवादों में 1959 में केरल में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व वाली राज्य सरकार को बर्खास्त करने का नेहरू सरकार का विवादास्पद फैसला था, जो राज्यों पर केंद्र की सत्ता के दावे का प्रारंभिक संकेत है। हालांकि, इस अवधि में, लोकप्रिय क्षेत्रीय मांगों ने केंद्र को भाषाई राज्यों के निर्माण के लिए मजबूर किया और हिंदी को राष्ट्रीय भाषा घोषित करने के केंद्र सरकार के प्रस्ताव के खिलाफ गैरहिंदी भाषी राज्यों का कड़ा विरोध-, सांस्कृतिक और राजनीतिक स्वायत्तता के लिए क्षेत्रीय दावे की अभिव्यक्तियाँ हैं, जिसने राष्ट्र निर्माण के केंद्रीकृत और समरूप मॉडल के प्रयासों को चुनौती दी )सक्सेना 2021 ,पृष्ठ संख्या-8)।

स्वतंत्रता के तुरंत बाद, भाषाई राज्यों के निर्माण की एक लोकप्रिय मांग थी, जो राष्ट्र निर्माण के केंद्रीकृत डिजाइन पर क्षेत्रीय भावना के दावे का संकेत था। अमेरिकी विद्वान सेलिग हैरिसन ने अपने शोध काम, भारतसबसे खतरनाक : दशक में, इस अवधि में भारतीय राज्य के लिए एक संभावित चुनौती के रूप में राष्ट्र निर्माण के एकात्मक और समरूप मॉडल के खिलाफ इस लोकप्रिय क्षेत्रीय प्रतिरोध की ताकत पर विचार किया। केंद्र सरकार ने शुरू में फूट के डर से भाषाई रूप से संगठित राज्यों के निर्माण के खिलाफ फैसला किया था )खानवाल्कर 2015 ,पृष्ठ संख्या-449), । हालांकि, भाषाई राज्यों के पक्ष में एक निरंतर क्षेत्रीय आंदोलन द्वारा दबाव बनाया गया और भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन का नेतृत्व किया। यह क्षेत्रीय पहचान का पहला दावा था, जबकि केंद्र सरकार के पास राज्य की सीमाओं को बनाने, हटाने और पुनर्निर्माण करने का अधिकार था, विभिन्न प्रमुख भाषा समूहों से क्षेत्रीय स्वायत्तता के रूप में क्षेत्रीयकरण के लिए दबाव - और बाद में, आदिवासी समुदायों ने भी केंद्र को भारत में संघीय राज्यों - को पुनर्गठित करने की एक औपचारिक व्यवस्था अपनाने के लिए मजबूर किया। 1967 के बाद दूसरे चरण में, कांग्रेस पार्टी केंद्र में सत्ता में थी, लेकिन कई राज्यों में सत्ता खो दी जहाँ कई क्षेत्रीय दलों के नेतृत्व वाली और कांग्रेसविरोधी गठबंधन - सरकारें बनीं। इस चरण ने कांग्रेस के नेतृत्व वाली केंद्र और विपक्षी दलों के नेतृत्व वाली राज्य सरकारों के बीच और अधिक प्रत्यक्ष संघर्षपूर्ण संघीय "अभिव्यंजक" गतिशीलता के युग के उद्भव को चिह्नित किया। इसके अलावा, 1969 में पार्टी के विभाजन के बाद पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के तहत कांग्रेस पार्टी अत्यधिक केंद्रीकृत और सत्तावादी हो गई और पार्टी के क्षेत्रीय नेताओं और संगठनात्मक संरचनाओं ने अपनी स्वायत्तता काफी हद तक खो दी। हालांकि इस अवधि के दौरान )1977 के राष्ट्रीय चुनाव को छोड़करकांग्रेस ने श्रीमती गांधी की ( लोकप्रियता पर सवार होकर राष ट्रीय चुनाव जीते, लेकिन निचले स्तर पर संगठनात्मक कमजोरी के कारण इसका सामाजिक आधार खत्म होने लगा (सिंह और ढ़िल्लो 2024, पृष्ठ संख्या-8)। परिणामस्वरूप, केंद्र ने विपक्ष शासित राज्य सरकारों को बर्खास्त करने के लिए अपनी विवेकाधीन शक्तियों का इस्तेमाल किया। जम्मूकश्मीर-, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल में मज़बूत क्षेत्रीय नेता केंद्र की सत्ता के दावे का विरोध करने के लिए उभरे, जिससे इस दौर में संघर्षपूर्ण संघवाद को बढ़ावा मिला। 1970 के दशक के अंत और 1980 के दशक के आरंभ में असम, पंजाब, कश्मीर और मिज़ोरम जैसे राज्यों में बड़े पैमाने पर राजनीतिक संकट बढ़े, जिसका एक कारण केंद्र की केंद्रीकरण प्रवृत्ति भी थी। हालाँकि, केंद्र की राजीव गांधी सरकार ने, कार्य करने के एक केंद्रीकृत मॉडल को अपनाते हुए, असम, पंजाब और मिज़ोरम में क्षेत्रीय पहचान संबंधी मांगों और राजनीतिक संघर्षों के समाधान खोजने के लिए एक सुलहकारी दृष्टिकोण अपनाने हेतु कुछ राजनीतिक गुंजाइश छोड़ी।

'बहुदलीय संघवाद' काल कहे जाने वाले तीसरे चरण के दौरान ,भारतीय राजनीति का पुनर्गठन हुआ ,जिसने राष्ट्रीय राजनीति के क्षेत्रीयकरण के लिए परिस्थितियाँ निर्मित किया। सबसे पहले ,चूँकि राष्ट्रीय राजनीति में कांग्रेस पार्टी का प्रभुत्व काफ़ी कम हो गया था और भारतीय जनता पार्टी अभी एकमात्र राष्ट्रीय विकल्प के रूप में उभार नहीं पाई थी ,इसने कई शक्तिशाली क्षेत्रीय दलों और नेताओं के लिए गठबंधन सरकारों में राष्ट्रीय भूमिका निभाने और राष्ट्रीय राजनीति के लिए राजनीतिक स्थान बनाया। इस अवधि ने कई क्षेत्रीय नेताओं को राष्ट्रीय सत्ता में साझेदारी करने का अवसर दिया क्योंकि कोई भी राष्ट्रीय दल पूर्ण संसदीय बहुमत हासिल करने में सक्षम नहीं था। चूँकि क्षेत्रीय दलों ने कांग्रेस और भाजपा (यूपीए) के नेतृत्व वाले राष्ट्रीय गठबंधनों में से किसी एक में शामिल होकर केंद्र (एएनडी) में एक राष्ट्रीय राजनीतिक भूमिका निभायी। इस दौर में केंद्रराज्य के बीच कटु - संघर्ष कम हुए और राज्य सरकारों को गिराने के लिए केंद्र द्वारा अनुच्छेद का । इस दौर में बदलती राजनीतिक गतिशीलता अंधाधुंध इस्तेमाल दुर्लभ हो गया और सर्वोच्च न्यायालय का एसआर बोम्मई केस में निर्णय ने अनुच्छेद356 के इस्तेमाल पर अंकुश लगाया। इसके अलावा ,इस अवधि में भारतीय अर्थव्यवस्था का उदारीकरण भी हुआ ,जिसने राज्य सरकारों और मुख्यमंत्रियों को अपनेअपने - राज्यों में व्यावसायिक प्रयास शुरू करने और विदेशी निवेश लाने के लिए पर्याप्त ) स्वायत्तता प्रदान कीसिंह और ढ़िल्लो 2024, पृष्ठ संख्या-6)। 1992 में 73वें और 74वें संशोधन अधिनियम के पारित होने से स्थानीय स्वशासन को मज़बूती मिली और ज़मीनी स्तर पर मज़बूती मिली। सही मायने में, तीसरे चरण ने केंद्रराज्य - विवादों और सौदेबाजी के माध्यम से वास्तविक संघवाद के द्वार खोले।

वर्तमान चरण में, 2014 के बाद से, भाजपा के उदय के साथ राष्ट्रीय पार्टी के दौर का संघवाद लौट आया है। तीन दशकों की गठबंधन सरकारों को समाप्त करते हुए , भाजपा ने 2014 और 2019 के लोकसभा चुनावों में अपने दम पर संसदीय बहुमत हासिल किया। लेकिन 2024 लोकसभा चुनाव में राष्ट्रीय राजनीति में पुन : क्षेत्रीय दलों का उभार हुआ है। वर्तमान समय में एनडीए गठबंधन और इंडिया गठबंधन की ताक़त क्षेत्रीय दल ही है।हालांकि भाजपा राष्ट्रीय स्तर पर एक बेहद शक्तिशाली ताकत बनी हुई है, कांग्रेस के कुछ मज़बूत होने के साथ, यह ज्यादातर क्षेत्रीय दल हैं जिन्होंने कुछ हद तक राज्य चुनावों में भाजपा की पैठ को चुनौती दी

है। इस अवधि में केंद्र और विपक्ष शासित राज्यों के बीच कुछ बड़े संघीय मतभेद देखे गए क्योंकि बाद में राष्ट्रीय सत्तारूढ़ पार्टी पर विपक्षी नेताओं को डराने और राज्य सरकारों को अस्थिर करने के लिए राज्यपाल के कार्यालय और केंद्रीय जांच एजेंसियों का उपयोग करने का आरोप लगाया )शर्मा 2023 ,पृष्ठ संख्या-5)। शासन के सवालों के संबंध में, जीएसटी कानून पारित करने, नीति आयोग और जीएसटी परिषद के गठन और राज्यों के धन का हिस्सा बढ़ाने के वित्त आयोग के प्रस्ताव को स्वीकार करने जैसे फैसलों पर प्रारंभिक संघीय सहमति थी। लेकिन अंततः, गैरभाजपा शासित राज्य सीएए-, कृषि कानूनों, राज्यों में बीएसएफ के अधिकार क्षेत्र ,जीएसटी मुआवजे और कोविड-19 महामारी के चरम के दौरान सहायता जैसे कई नीतिगत मुद्दों पर केंद्र के साथ टकराव में रहे। दिलचस्प बात यह है कि केंद्र कश्मीर में अनुच्छेद 370 को निरस्त करने और 'राष्ट्रीय संघवाद' कहे जाने वाले राष्ट्रवादी मुद्दे पर सीएए जैसे विवादास्पद मुद्दों पर कुछ विपक्षी शासित राज्यों को भी शामिल करने में सक्षम रहा है । हालांकि, अभूतपूर्व कोविड-19 संकट के बाद के चरणों के दौरान, केंद्र ने इस तरह के स्वास्थ्य आपातकाल में विकेंद्रीकृत और स्थानीयकृत शासन के महत्व को पहचाना और राज्यों को संकट से निपटने के लिए स्वायत्तता दी।

## केंद्रीय प्रभुत्व के ख़िलाफ़ क्षेत्रीय उभार

यद्यपि भारतीय संघवाद में केंद्र सरकार के प्रति झुकाव रहा है, फिर भी राज्य भी वर्षों से अपने हितों और प्रभाव को स्थापित करने का प्रयास करते रहे हैं, चाहे वह एकदलीय प्रभुत्व का दौर हो या बहुदलीय गठबंधन की राजनीति का। भारतीय संघवाद के प्रथम चरण को एकदलीय संघवाद कहा जाता है। इस चरण में कांग्रेस व्यवस्था के अंतर्गत क्षेत्रीय नेताओं के प्रभाव और भाषायी स्वयातता के उदय ने राष्ट्रीय राजनीति पर क्षेत्रीय प्रभुत्व को चिह्नित किया, जिसने भारतीय स्वतंत्रता के समय से ही संघीय भावना को मजबूत किया। निम्नलिखित अनुच्छेद उन राजनीतिक कारकों को रेखांकित करते हैं जिन्होंने कांग्रेस पार्टी के प्रभुत्व के बावजूद भारतीय राजनीति के विकेंद्रीकरण को संभव बनाया। 1952 के आम चुनावों के बाद-भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस केंद्र के साथ-के बाद पहला आजादी-साथ राज्यों में भी सबसे प्रभावशाली पार्टी के रूप में उभरी। इसके बाद से कांग्रेस पार्टी भारतीय राजनीति पर पूरी तरह से हावी रही, 1967 के चुनावों तक जब इसे एक बड़े चुनावी झटके का सामना करना पड़ा। संघीय व्यवस्था ऐसी थी कि राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य की अध्यक्षता कांग्रेस के राष्ट्रीय नेतृत्व द्वारा की जाती थी, जिसका नेतृत्व प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू करते थे, जबकि क्षेत्रीय कांग्रेस नेताओं का अपना एक जनाधार था और उनके पास अपनेअपने राज्यों में काफी - प्रभाव था शक्ति और (सिंह और ढ़िल्लो 2024, पृष्ठ संख्या-7)।

राजनीतिक विशेषकों के अनुसार कांग्रेस की सफलता "नेहरू के जनमत संग्रह नेतृत्व और लोकप्रिय अपील के साथसाथ उसके राज्य स्तरीय संगठन का एक - संयोजन थी। अपनेअपने प्रभाव क्षेत्र में राष्ट्रीय और राज्य नेतृत्व का- सह-अस्तित्व आंतरिक पार्टी संघवाद का एक सर्वसम्मत मॉडल था 1964 में नेहरू की मृत्यु के बाद भी, क्षेत्रीय नेताओं ने राष्ट्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना जारी रखा। कांग्रेस के इन उल्लेखनीय क्षेत्रीय नेताओं का राजनीतिक पतन अंततः 1967 के राष्ट्रीय चुनावों में उनकी चुनावी हार और इंदिरा गांधी के साथ उनकी सत्ता की खींचतान के बाद हुआ। केरल में, 1959 में नेहरू के नेतृत्व में केंद्र द्वारा ईएमएस नंबूदरीपाद के नेतृत्व वाली कम्युनिस्ट सरकार को भंग करना, संघीय संबंधों में एक असाधारण घटना थी (अब्ज़र्वर रीसर्च फ़ाउंडेशन 2024, पृष्ठ संख्या-4। इसने इस बात के शुरुआती( संकेत दिए कि जब राज्य केंद्र में राष्ट्रीय सत्ताधारी दल के विरोधी दलों के शासन में आ जाते हैं, तो भारतीय संघवाद कैसे बिगड़ सकता है। इसलिए, एकदलीय प्रभुत्व के इस दौर में, सहमतिपूर्ण संघवाद की सीमाएँ और एक अधिक टकरावपूर्ण संघीय अंतःक्रिया की शुरुआत सीमित रूप से उभरी।

इसके बाद 1989 से विभिन्न राज्यों में क्षेत्रीय दलों ने अपनी सरकार बनाने में सफलता प्राप्त किया। इसके बाद से भारत में केंद्रराज्य संबंधों में कई बदलाव - और कांग्रेस जैसे राष्ट्रीय दलों के (भाजपा) आए हैं। इसका भारतीय जनता पार्टी मुकाबले क्षेत्रीय दलों की बढ़ती ताकत से काफी लेना ,देना है। दक्षिणी भारत-पूर्वी भारत और उत्तर भारत के राज्यों में क्षेत्रीय दलों ने अपनी दमदार उपस्थिति से संघवाद को प्रभावित किया है। हालाँकि कई प्रयोग हुए हैं, लेकिन क्षेत्रीय दलों ने 2004 से वर्तमान कांग्रेस के नेतृत्व वाली संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) गठबंधन सरकार के कामकाज में एक प्रमुख भूमिका निभाई है। भाजपा के नेतृत्व के गठन में क्षेत्रीय दलों की महत्वपूर्ण (राजग) वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन भूमिका थी, जिसने 1998-2004 तक शासन किया। आजादी से लेकर 1980 के दशक तक के दौर में जब कांग्रेस का दबदबा था, क्षेत्रीय दलों ने केंद्रराज्य संबंधों - को प्रभावित करने वाले आर्थिक और राजनीतिक मुद्दों पर कड़ा रुख अपनाया। पर भी मुख्यधारा यह कहना उचित ही होगा कि क्षेत्रीय दलों की जायज शिकायतों में पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। यह इस तथ्य के बावजूद है कि 1977, 1989 और 1990 में गठबंधन के प्रयोग हुए थे। राजनीतिक और आर्थिक दोनों तरह की अधिक स्वायत्तता की मांगों को गंभीरता से नहीं लिया गया था, मुख्यधारा के राजनीतिक दलों का कहना था कि इस तरह के बदलाव केंद्र को कमजोर करेंगे और भारत के राजनीतिक संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव डालेंगे )सिंह 2022, पृष्ठ संख्या-66)। अधिक स्वायत्तता की दिशा में पहला महत्वपूर्ण कदम 1996 और 1997 के संयुक्त मोर्चा प्रयोग से प्रेरित था। उस प्रयोग के परिणामस्वरूप, और राज्यों को अधिक आर्थिक और प्रशासनिक स्वायत्तता के हस्तांतरण पर इसके जोर के कारण, भारत की केंद्रीकृत राजनीतिक संरचना में एक अधिक संघीकृत इकाई बनने की दिशा में एक वास्तविक बदलाव देखा गया। गठबंधन सरकारें भारत में एक स्वीकृत मानदंड बन गई हैं। राज्यों को अधिक स्वायत्तता देने और केंद्र द्वारा प्रायोजित अधिकांश कार्यक्रमों को राज्य सरकारों को हस्तांतरित करने की अपनी दृढ़ प्रतिबद्धता के साथ, क्षेत्रीय दलों ने संघवाद के कारण को सफलतापूर्वक आगे बढ़ाया है। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन )NDA) को कई मौकों पर तमिलनाडु की द्रविड़ मुनेत्र कड़गम )DMK), आंध्र प्रदेश की तेलुगु देशम पार्टी )TDP) और जम्मूकश्मीर की नेशनल कॉन्फ्रेंस जैसे सहयोगियों के - आगे झुकना पड़ा। पहली एनडीए सरकार वास्तव में डीएमके द्वारा समर्थन वापस लेने के परिणामस्वरूप गिर गई थी। इसी प्रकार, जम्मूक कश्मीर को अधि-स्वायत्तता देने के मुद्दे पर, एनडीए के एक महत्वपूर्ण घटक दल, नेशनल कॉन्फ्रेंस और गठबंधन का नेतृत्व करने वाली भाजपा के बीच मतभेद थे।

## अपेक्षाएँ और चुनौतियाँ

भारतीय संविधान कुछ एकात्मक विशेषताओं के साथ एक संघीय प्रणाली स्थापित करता है। इसे कभी संघीय-कभी अर्ध-प्रणाली कहा जाता है, क्योंकि इसमें महासंघ और संघ दोनों के तत्व शामिल हैं। संविधान संघ सरकार और राज्य सरकारों के बीच विधायी, प्रशासनिक और कार्यकारी शक्तियों के वितरण को निर्दिष्ट करता है। विधायी शक्तियों को संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के तहत वर्गीकृत किया गया है, जो संघ सरकार, राज्य सरकारों को प्रदान की गई शक्तियों और उनके बीच साझा की गई शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। संविधान राजनीतिक शक्ति वितरण के कई तरीकों के साथ एक बहुस्तरीय या बहुस्तरीय संघ की स्थापना का भी प्रावधान करता है। भारतीय संघवाद अपने संदर्भ में अद्वितीय है, क्योंकि यह ब्रिटिश शासन के तहत एकात्मक प्रणाली से स्वतंत्रता के बाद संघीय प्रणाली में विकसित हुआ है। भारतीय संघवाद को समय के साथ कई चुनौतियों और मुद्दों का सामना करना पड़ा है, जैसे रियासतों का एकीकरण, राज्यों का भाषाई पुनर्गठन, क्षेत्रीय आंदोलन और स्वायत्तता की मांग, केंद्रराज्य स-ंबंध और संघर्ष, राजकोषीय संघवाद और संसाधन साझाकरण, सहकारी संघवाद और अंतर स्वेंडेन और रेखा) राज्य समन्वय आदि-2022 ,पृष्ठ संख्या-19)।

भारतीय संघवाद के समक्ष चुनौतियाँ हैंक्षेत्रवाद :; शक्तियों का विभाजन; राजकोषीय संघवाद का अभाव; इकाइयों का असमान प्रतिनिधित्व; केंद्रीकृत संशोधन शक्ति। भाषाई, जातीय, धार्मिक या सांस्कृतिक पहचान के आधार पर क्षेत्रीय दलों और आंदोलनों के उदय ने भारत की राष्ट्रीय एकता और अखंडता के लिए चुनौती पेश की है। कुछ क्षेत्रों या समूहों ने अधिक स्वायत्तता, विशेष दर्जा या

यहां तक कि भारतीय संघ से अलग होने की मांग की है। उदाहरण के लिए, पश्चिम बंगाल में गोरखालैंड, असम में बोडोलैंड आदि की मांग। केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन स्पष्ट और संतुलित नहीं है। केंद्र के पास राज्यों की तुलना में अधिक शक्तियां और संसाधन हैं और वह राष्ट्रपति शासन, राज्यपाल की भूमिका, केंद्रीय कानून आदि जैसे विभिन्न माध्यमों से उनके मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है। राज्यों के पास अपने विकास और कल्याणकारी नीतियों को आगे बढ़ाने के लिए सीमित स्वायत्तता और राजकोषीय स्थान है। उदाहरण के लिए, 2016 में अरुणाचल प्रदेश और उत्तराखंड में संवैधानिक टूटन के आधार पर राष्ट्रपति शासन लगाया गया था। केंद्र अधिकांश करों को एकत्र करता है और अपने विवेक या मानदंडों के अनुसार राज्यों को वितरित करता है। राज्य अनुदान, ऋण और अन्य हस्तांतरण के लिए केंद्र पर निर्भर करते हैं। राज्यों के पास सीमित कराधान शक्तियां और उधार लेने की क्षमताएं हैं। उदाहरण के लिए, कई राज्यों ने जीएसटी कार्यान्वयन के कारण राजस्व हानि के लिए अपर्याप्त मुआवजे के बारे में शिकायत की है। संसद और अन्य संघीय संस्थानों में राज्यों का प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या, क्षेत्र या योगदान के अनुपात में नहीं है। कुछ राज्यों का प्रतिनिधित्व अधिक है जबकि अन्य का प्रतिनिधित्व कम है। उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश में 80 लोकसभा सीटें हैं जबकि सिक्किम में केवल एक है। यह राष्ट्रीय निर्णय लेने और संसाधन आवंटन में विभिन्न राज्यों की आवाज और प्रभाव को प्रभावित करता है। संविधान में संशोधन करने की शक्ति विशेष बहुमत वाली संसद में निहित है। राज्यों को प्रभावित करने वाले कुछ मामलों को छोड़कर संशोधन प्रक्रिया में उनकी कोई भूमिका या कहना नहीं है। उदाहरण के लिए, 2019 में अनुच्छेद 370 को निरस्त करने और जम्मूकश्-मीर को दो केंद्र शासित प्रदेशों में विभाजित करने का केंद्र का निर्णय राज्य सरकार या अन्य हितधारकों से परामर्श किए बिना लिया गया था और 2014 में आंध्र प्रदेश से तेलंगाना के निर्माण का आंध्र प्रदेश द्वारा विरोध किया गया था और इसके कारण विरोध प्रदर्शन और हिंसा हुई थी (शेट्टीगर और मिश्रा 2022 ,पृष्ठ संख्या-215(। केरल, पंजाब, दिल्ली, तमिलनाडु, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल आदि गैरभाजपा शासित राज्य - सरकारों को राज्य विधानमंडल द्वारा पारित महत्वपूर्ण विधेयकों पर अपनी सहमति देने के लिए संबंधित राज्यपालों को निर्देश देनेहेतु माननीय सर्वोच्च न्यायालय का रुख करना पड़ा है, लेकिन राज्यपाल इन पर कोई कार्रवाई किए बिना ही बैठे रहे हैं। यह राज्यपाल पद के दुरुपयोग के हालिया चलन में से एक है। ऐसा लगता है कि राज्यपालों के बीच दिल्ली में बैठे अपने राजनीतिक आकाओं को खुश करने और अधिक लाभ उठाने की अंधी दौड़ चल रही है।

दक्षिण के राज्यों का आरोप है कि अत्यधिक केंद्रीकरण की वजह से आर्थिक संघवाद कमज़ोर हुआ है। आर्थिक संघवाद के कमज़ोर होने की वजह से दक्षिण के राज्यों को केंद्र से कम वित्तीय सहायता मिल रही है। इन राज्यों का आरोप है कि वर्तमान समय में वस्तु एवं सेवा कर के दौर में दक्षिण के राज्य (जीएसटी) सही से नहीं हो रहा है। सर्वाधिक अप्रत्यक्ष कर देते हैं लेकिन इस कर में बँटवारा संविधान सभा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण सुझाव देश और राज्यों के बीच वित्तीय संबंधों से संबंधित था। बीआर अंबेडकर जैसे संविधान निर्माताओं का मानना था कि राज्यों को अपनी कर शक्तियां दी जानी चाहिए और एक स्थिर संघ के लिए आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर राज्य आवश्यक हैं। संविधान में संघीय सिद्धांतों को ऐसी चर्चाओं के माध्यम से आकार दिया गया था। हालांकि, समय के साथ, केंद्र के पास वित्तीय शक्तियों को केंद्रित करने की कार्रवाई हुई है। पिछले एक दशक में, देश में ऐसी नीतियां प्रचलित रही हैं जो राज्यों के सर्वोत्तम हितों को पूरी तरह से कमजोर करती हैं। जीएसटी के कार्यान्वयन के साथ, राज्यों ने अपनी कर शक्तियां पूरी तरह से खो दी हैं )अब्ज़र्वर रीसर्च फ़ाउंडेशन 2024, पृष्ठ संख्या-2)। आज, राज्य केवल पेट्रोल, डीजल और शराब जैसे सीमित संसाधनों पर ही कर लगा सकते हैं। वस्तु एवं सेवा कर राजस्व में उत्तर प्रदेश की हिस्सेदारी 18 प्रतिशत हो गया है जबकि दक्षिण के सभी राज्यों को कुल मिलाकर 16.05 प्रतिशत ही मिल पाता है।

**तालिका 1:** दक्षिण के राज्यों का वस्तु एवं सेवा कर में हिस्सेदारी

| क्रम संख्या | दक्षिण के राज्य | वस्तु एवं सेवा कर में हिस्सेदारी (प्रतिशत( |
|---|---|---|
| 1. | तमिलनाडु | 4.20 |
| 2. | आंध्र प्रदेश | 4.11 |
| 3. | कर्नाटक | 3.65 |
| 4. | तेलंगाना | 2.13 |
| 5. | केरल | 1.96 |
| | कुल हिस्सेदारी | 16.05 |

**स्रोत:** वित्त मंत्रालय ,भारत सरकार

पिछले कुछ समय से, दक्षिणी राज्यों, खासकर तमिलनाडु के नेताओं ने केंद्र पर धन आवंटन में निष्पक्षता न बरतने का आरोप लगाया है। विवाद का केंद्र बिंदु कर हस्तांतरण नीतियों में बदलाव है, खासकर वस्तु एवं सेवा कर की (जीएसटी) शुरुआत और15वें वित्त आयोग द्वारा अपनाए गए मानदंडों के साथ। करों के वितरण पर गहराई से विचार करने से पहले, यह समझना ज़रूरी है कि नीतिगत फैसलों ने दक्षिणी राज्यों पर किस तरह नकारात्मक प्रभाव डाला है और संघीय ढांचे में उनकी वित्तीय स्वायत्तता को कैसे नष्ट किया है (आर्थी 2022, पृष्ठ संख्या-5(। जीएसटी से पहले, राज्यों को मूल्य वर्धित कर की दरें तय करने में स्वायत्तता प्राप्त थी, जिससे वे अपनी वित्तीय ज़रूरतों के अनुसार कराधान को समायोजित कर सकते थे। हालाँकि, जीएसटी लागू होने के बाद, उन्हें धन के वितरण के लिए केंद्र सरकार पर निर्भर होना पड़ा। जब जीएसटी लागू किया गया था, तब केंद्र ने राज्यों को कर राजस्व में 14 प्रतिशत की वृद्धि और संक्रमण के दौरान किसी भी नुकसान के लिए उचित मुआवज़ा देने का आश्वासन दिया था। जीएसटी क्षतिपूर्ति उपकर लगाया गया था और माना जाता है कि दक्षिणी राज्यों को सबसे ज़्यादा मुआवज़ा मिलेगा क्योंकि वे विभाज्य पूल में अधिक योगदान देते हैं। लेकिन ऐसा हुआ नहीं जीएसटी क्षतिपूर्ति उपकर से दक्षिण के राज्यों को कम मुआवज़ा दिया गया।

हालांकि, राज्यों को जीएसटी मुआवजा पिछले साल बंद कर दिया गया था, हालांकि इस उद्देश्य के लिए शुरू किया गया जीएसटी मुआवजा उपकर अभी भी केंद्र सरकार द्वारा एकत्र किया जा रहा है; इस बीच तमिलनाडु सहित राज्यों को 20, 000 करोड़ रुपये से अधिक का वार्षिक घाटा हो रहा है। मामले को और बदतर बनाने के लिए, 15वें वित्त आयोग ने 2011 की जनगणना को कर हस्तांतरण के निर्धारक के रूप में इस्तेमाल करके इस विभाजन को और बढ़ा दिया। पिछले आयोग की कार्यप्रणाली, जिसमें 1971 और 2011 की जनगणनाओं का मिश्रण शामिल था, से इस बदलाव का उद्देश्य प्रभावी जनसंख्या नियंत्रण उपायों के लिए राज्यों को पुरस्कृत करना था। हालाँकि, 2011 की जनगणना पर निर्भरता के कारण एक ऐसा परिदृश्य सामने आया है जहाँ उत्तर प्रदेश जैसे बड़ी आबादी वाले राज्यों को काफ़ी ज़्यादा हिस्सा मिलता है, जिससे कम आबादी वाले दक्षिणी राज्य नुकसान में रह जाते हैं। उत्तर प्रदेश को हस्तांतरित करों का 18 प्रतिशत प्राप्त हुआ, जबकि तमिलनाडु को 4.2 प्रतिशत, कर्नाटक को 3.65 प्रतिशत, तेलंगाना को 2.13 प्रतिशत, आंध्र प्रदेश को 4.11 प्रतिशत और केरल को 1.96 प्रतिशत प्राप्त हुआ )सिंह और ढ़िल्लो 2024, पृष्ठ संख्या-3)। तमिलनाडु के खेल मंत्री उदयनिधि स्टालिन, जो इस कथित असमानता के मुखर आलोचक हैं, ने इस मुद्दे पर वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण से सवाल किया और दक्षिणी राज्यों के लिए निष्पक्षता की माँग की। इन्हीं चिंताओं के मद्देनज़र, दक्षिण के राज्यों के जनप्रतिनिधि ने कई सत्र में संसद में एक प्रश्न उठाया था, जिसमें जीएसटी, राज्यों द्वारा केंद्र सरकार को दिए गए प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों, और पिछले पाँच वर्षों में केंद्रीय करों के हिस्से के रूप में प्रत्येक राज्य को आवंटित धनराशि के बारे में विस्तृत जानकारी मांगी गई थी। इस प्रश्न के उत्तर में केंद्रीय वित्त मंत्रालय द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों से पता चला कि पिछले पाँच वर्षों में तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तेलंगाना और केरल ने सामूहिक रूप से जीएसटी और प्रत्यक्ष करों के माध्यम से (जीएसटी को छोड़कर)22.26 लाख करोड़ रुपये से अधिक का योगदान दिया, जबकि केवल 6.42 लाख करोड़ रुपये

ही हस्तांतरित किए गए। इसके विपरीत, उत्तर प्रदेश ने इसी अवधि में केवल 3.41 लाख करोड़ रुपये का योगदान दिया और उसे 6.91 लाख करोड़ रुपये आवंटित किए गए।

इसके अलावा, राज्यों को जारी किए गए केंद्रीय करों और शुल्कों के अनुपात की जाँच करने पर, जीएसटी और प्रत्यक्ष कर में भुगतान किए गए प्रत्येक रुपये के लिए, तमिलनाडु को 2018-19 और 2022-23 के बीच औसतन केवल 26 पैसे, कर्नाटक को 19 पैसे, केरल को 62 पैसे, आंध्र प्रदेश को 50 पैसे और तेलंगाना को 40 पैसे मिले। वास्तव में, 2018-19 और 2022-23 के बीच तमिलनाडु का हिस्सा 27 पैसे से घटकर 24 पैसे, कर्नाटक का 22 पैसे से घटकर 12 पैसे, तेलंगाना का 60 पैसे से घटकर 31 पैसे, केरल का 81 पैसे से घटकर 50 पैसे और आंध्र प्रदेश का 56 पैसे से घटकर 49 पैसे रह गया है (अब्ज़र्वर रीसर्च फ़ाउंडेशन 2024, पृष्ठ संख्या-8।( इसके विपरीत, उत्तर प्रदेश को केंद्र सरकार को दिए गए प्रत्येक एक रुपये पर 2.02 रुपये, मध्य प्रदेश को 1.70 रुपये और राजस्थान को 1.14 रुपये मिले। यह दक्षिणी राज्यों और कुछ उत्तरी राज्यों के बीच असमानता को स्पष्ट रूप से दर्शाता है। इन दक्षिण भारतीय राज्यों को उनके योगदान का लगभग 25 प्रतिशत हिस्सा मिलता है, जबकि उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों को 200 प्रतिशत से भी ज़्यादा आवंटित किया जाता है। दक्षिण के राज्यों की एकमात्र चिंता यह है कि दक्षिणी राज्यों को कम आवंटन क्यों दिया जा रहा है उनके -प्रति इतना पक्षपात क्यों? जनसंख्या वृद्धि नियंत्रण उपायों सहित अच्छी नीतियों को लागू करने के बावजूद दक्षिणी राज्यों को दंडित क्यों किया जा रहा है? अब समय आ गया है कि आवंटन के फार्मूले पर पुनर्विचार किया जाए और दक्षिणी राज्यों को उनका उचित हिस्सा दिया जाए, जैसा कि दक्षिणी नेताओं की मांग है।

केंद्र या प्रमुख समूहों की ओर से बढ़ते समरूपता और समावेशन के दबाव के मद्देनजर भारत के समाज, संस्कृति, भाषा, धर्म आदि की विविधता और बहुलवाद की रक्षा और संरक्षण के लिए विविधता और बहुलवाद को संरक्षित करके संघवाद को मजबूत करने की आवश्यकता है। केंद्र या अन्य बाहरी ताकतों की ओर से बढ़ते केंद्रीकरण और हस्तक्षेप के मद्देनजर राज्यों और अन्य उप राष्ट्रीय-इकाइयों की स्वायत्तता और अधिकारों की रक्षा और उन्हें बढ़ाने के लिए राष्ट्र-स्वायत्तता और अधिकारों की रक्षा करना। राज्यों और अन्य उपरीय इकाइयों को उनकी जरूरतों और क्षमताओं के अनुसार अपनी नीतियों और कार्यक्रमों को तैयार करने और लागू करने के लिए सशक्त और सक्षम बनाकर विभिन्न स्तरों पर शासन और सेवा वितरण की गुणवत्ता और दक्षता में सुधार करना और उसे सुनिश्चित करना। सरकार के विभिन्न स्तरों या इकाइयों के बीच संसाधनों और अवसरों के समान और पारदर्शी वितरण को सुनिश्चित करके भारत के सभी क्षेत्रों और वर्गों के संतुलित और समावेशी विकास और कल्याण को बढ़ावा देना और प्राप्त करना। सद्भाव और सहयोग को बढ़ावा देना टकराव और दबाव के बजाय - बातचीत और परामर्श के माध्यम से विवादों और संघर्षों को हल करके सरकार के विभिन्न स्तरों या इकाइयों के बीच सद्भाव और सहयोग को बढ़ावा देना और बनाए रखना )जाफ़रलॉट और वर्नियर्स 2020, पृष्ठ संख्या-149)।

संघवाद को बढ़ावा देने वाली संस्थाएँ हैंसर्वोच्च न्यायालय :, जो देश का सर्वोच्च न्यायिक निकाय है और संविधान के संरक्षक और व्याख्याता के रूप में कार्य करता है। इसे केंद्र और राज्यों के बीच या राज्यों के बीच विवादों का निपटारा करने का अधिकार है (बोस 2023, पृष्ठ संख्या-40राज्यीय परिषद-। अंतर(, जो संविधान के अनुच्छेद 263 के तहत स्थापित एक संवैधानिक निकाय है, केंद्र और राज्यों के बीच साझा हित और चिंता के मामलों पर समन्वय और सहयोग को बढ़ावा देने के लिए है। इसमें प्रधानमंत्री, सभी राज्यों के मुख्यमंत्री, विधानसभा वाले केंद्र शासित प्रदेशों के मुख्यमंत्री और प्रधानमंत्री द्वारा नामित छह केंद्रीय मंत्री शामिल होते हैं। वित्त आयोग, जो संविधान के अनुच्छेद 280 के तहत केंद्र और राज्यों के बीच राजस्व के वितरण की सिफारिश करने के लिए स्थापित एक संवैधानिक निकाय है। यह राज्यों के संसाधनों को बढ़ाने और ज़रूरतमंद राज्यों को अनुदान सहायता देने के उपाय भी सुझाता है।

नीति आयोग, जिसकी स्थापना 2015 में योजना आयोग के स्थान पर की गई थी। यह आर्थिक और सामाजिक विकास के मामलों पर केंद्र और राज्यों के लिए एक थिंक टैंक और सलाहकार निकाय के रूप में कार्य करता है। यह नीति निर्माण और कार्यान्वयन में राज्यों को शामिल करके सहकारी संघवाद को भी बढ़ावा देता है। इसमें एक अध्यक्ष (प्रधानमंत्री), एक उपाध्यक्ष, एक मुख्य कार्यकारी अधिकारी, पूर्णकालिक सदस्य, अंशकालिक सदस्य, पदेन सदस्य सभी राज्यों के मुख्यमंत्री ) और विशेष आमंत्रित सदस्य शामिल (और केंद्र शासित प्रदेशों के उपराज्यपाल होतेहैं। भारत में संघवाद को मज़बूत करने के उपायों में शामिल हैंशक्तियों और : संसाधनों का हस्तांतरण बढ़ाना; अधिक प्रतिनिधित्व और भागीदारी सुनिश्चित करना; सहकारी और प्रतिस्पर्धी संघवाद को बढ़ावा देना; क्षेत्रीय असंतुलन और असमानताओं को दूर करना; संघीय सिद्धांतों और भावना का सम्मान करना।

## निष्कर्ष

यद्यपि भारत की संघीय व्यवस्था में एक अंतर्निहित केंद्रीय पूर्वाग्रह है, फिर भी विभिन्न क्षेत्रों की पहचान, स्वायत्तता और विकास की विविध और स्थानीयकृत माँगों और आकांक्षाओं ने राजनीति को कई मायनों में उदार होने के लिए बाध्य किया है। चारों चरणों में, मूल संघीय ढाँचे की रक्षा करते हुए क्षेत्रीय शक्तियों द्वारा केंद्रीकरण और एकरूपता के प्रयासों का विरोध किया गया है। तृतीयस्तरीय - स्थानीय स्वशासन का समावेश भी शासन के निम्नतम स्तर पर सत्ता का विकेंद्रीकरण करके भारतीय संघवाद के एकमज़बूत स्तंभ के रूप में प्रभावी रूप से उभरा है। हालाँकि, दो प्रमुख चुनौतियाँ व्यापक संघीय सहयोग को बाधित करती हैं। पहली, भारत में संघीय संबंध राजनीतिक पक्षपात की चिंताओं से बुरी तरह प्रभावित हैं क्योंकि केंद्र और राज्यों में प्रतिद्वंद्वी दलों के बीच आपसी अविश्वास और चुनावी प्रतिस्पर्धा राजनीतिक संवाद और आम सहमति बनाने की संभावनाओं को धूमिल करती है। दूसरी, इस तरह के बढ़ते राजनीतिक विभाजन और संदेह के कारण, अंतरराज्यीय परिषद-, जीएसटी परिषद, नीति आयोग और क्षेत्रीय परिषद जैसी अंतरसरकारी संस्थाएँ शासन के महत्वप-ूर्ण मुद्दों पर केंद्र-राज्यीय मतभेदों को सुलझाने के लिए बड़े पैमाने पर कम उपयोग -राज्य और अंतर में आ रही हैं। इसके अलावा, जैसा कि हाल ही में प्रधानमंत्री मोदी ने स्वीकार किया है , कोविड-19 महामारी ने एक बार फिर भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में प्रभावी शासन और विकास प्रदान करने के लिए एक मजबूत संघीय ढांचे की निर्विवाद आवश्यकता को बल दिया है । दक्षिण के राज्यों का आरोप है कि जीएसटी के क्रियान्वयन से देश के बिहार, उत्तर प्रदेश और राजस्थान जैसे गरीब, शुद्ध उपभोक्ता राज्यों को लाभ हुआ है, जबकि तमिलनाडु, कर्नाटक, हरियाणा और गुजरात जैसे शुद्ध उत्पादक राज्यों को नहीं। 18वीं लोकसभा चुनाव के परिणाम ने एक बार फिर से राष्ट्रीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका को बढ़ावा दिया है। इस परिणाम ने सहकारी संघवाद पर अपनी सहमति प्रदान किया है।

## संदर्भ सूची


1. भट्टाचार्य, हरिहर (2020), भारत में असममित संघवाद, नई दिल्ली: पालग्रेव मैकमिलन
2. हुमा, बेबी (2015), भारतीय संघवाद को समझना, भारतीय राजनीति विज्ञान जर्नल, खंड-76, अंक-04, पृष्ठ संख्या-792-795
3. बोस, अदियाजित (2023), संघवाद और उसके सिद्धांत: एक आलोचनात्मक विश्लेषण, भारतीय जेएल और कानूनी आरएससी, खंड-5, अंक-1, पृष्ठ संख्या-1-15
4. खान, अर्शी और पाल, कुशल (2012), भारत में संघवाद और राष्ट्र निर्माण, नई दिल्ली: मैकमिलन पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड
5. भट्टाचार्य, हरिहर (2007), भारत में संघवाद और प्रतिस्पर्धी राष्ट्र, नई दिल्ली: रूतलेज पब्लिकेशन
6. रेड्डी, वाय.वी. और रेड्डी, जी.आर. (2018), भारतीय राजकोष संघवाद, लंदन: आक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

7. जाफ़रलॉट, क्रिस्टोफ़ और वर्नियर्स, गिल्स (2020), एक नई पार्टी प्रणाली या एक नई राजनीतिक प्रणाली?, समकालीन दक्षिण एशिया जर्नल, अंक-2, खंड-28, पृष्ठ संख्या-141-154
8. टिलिन, लुईस (2007), विविधता में एकजुट? भारतीय संघवाद में विषमता, पब्लियस: द जर्नल ऑफ फ़ेडरलिज़्म , अंक 1, खंड 37, पृष्ठ संख्या- 45-67
9. अय्यर, यामिनी और टिलिन, लुईस (2020), एक राष्ट्र", भाजपा और भारतीय संघवाद का भविष्य, इंडिया रिव्यू, अंक-2, खंड-19, पृष्ठ संख्या-117-135
10. एडेनी, कैथरिन और भट्टाचार्य, हरिहर (2020), भारत में बहुराष्ट्रीय संघवाद के समक्ष वर्तमान चुनौतियाँ, क्षेत्रीय और संघीय अध्ययन, पब्लियस: द जर्नल ऑफ फ़ेडरलिज़्म , अंक-4, खंड-28, पृष्ठ संख्या-409-425
11. सिन्हा, असीम (2004), भारत में संघवाद की बदलती राजनीतिक अर्थव्यवस्था: एक ऐतिहासिक संस्थागत दृष्टिकोण, इंडिया रिव्यू, अंक-1, खंड-3, पृष्ठ संख्या-25-63
12. कुमार, आशुतोष (2024), पार्टियाँ संघवाद की दिशा को कैसे प्रभावित करती हैं: भारत, इंडिया रिव्यू, अंक-4, खंड-23, पृष्ठ संख्या-345-369
13. खान, एमजी (2003), भारत में गठबंधन सरकार और संघीय व्यवस्था, भारतीय राजनीति विज्ञान जर्नल, अंक-64, खंड-3, पृष्ठ संख्या-167-190
14. आर्थी, ए. (2022), राष्ट्र की अखंडता प्राप्त करने के लिए एक उपकरण के रूप में भारतीय संघवाद: एक महत्वपूर्ण अध्ययन, इंडियन जर्नल ऑफ़ लॉ एंड लीगल रीसर्च, अंक-4, खंड-6, पृष्ठ संख्या- 1-15
15. बागची, अमरेश (2003), संघवाद पर पुनर्विचार: केंद्र और राज्यों के बीच बदलते शक्ति संबंध, पब्लियस: द जर्नल ऑफ फ़ेडरलिज़्म , अंक-4, खंड-33, पृष्ठ संख्या- 21-42
16. सिंह, अजय कुमार (2018), भारत में गतिशील विकेंद्रीकरण, 1950-2010, पब्लियस: द जर्नल ऑफ फ़ेडरलिज़्म , अंक-1, खंड-49, पृष्ठ संख्या-112–137
17. शेट्टीगर, जगदीश और मिश्रा (2022), पूजा सहकारी संघवाद, ऑक्सफ़ोर्ड अकादमिक प्रेस, अंक-1, खंड-1, पृष्ठ संख्या-214-217
18. नीति आयोग (2024), सहकारी संघवाद, URL: https://www.niti.gov.in/cooperative-federalism
19. स्वेंडेन, विल्फ्रेड और सक्सेना, रेखा (2022), संघ पर निगरानी: भारत में सर्वोच्च न्यायालय और न्यायिक संघवाद, क्षेत्र, राजनीति, शासन जर्नल, अंक-1, खंड-10, पृष्ठ संख्या-12-31
20. सिंह, महेंद्र प्रसाद (2022), भारत में संघवाद, नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशनस प्राइवेट लिमिटेड
21. घोष, अम्बर कुमार (2022), भारतीय संघवाद @75: एक मजबूत लोकतंत्र की नींव, अब्ज़र्वर रीसर्च फ़ाउंडेशन, URL: https://www.orfonline.org/expert-speak/indian-federalism-75-the-foundation-of-a-strong-democracy
22. अब्ज़र्वर रीसर्च फ़ाउंडेशन (2024), भारत में संघवाद, URL: https://www.orfonline.org/tags/federalism-in-india
23. खानवाल्कर, वर्षा (2015), भारत में संघवाद, भारतीय राजनीति विज्ञान जर्नल, अंक-3, खंड-76, पृष्ठ संख्या- 447-451
24. सक्सेना, रेखा (2021), भारत में सहकारी और सहयोगात्मक संघवाद की कार्यप्रणाली: अंतर-सरकारी संबंधों को समझना, भारतीय लोक प्रशासन जर्नल, अंक-2, खंड-67, पृष्ठ संख्या-1-12
25. सिंह, राजवीर और ढ़िल्लो, संदीप (2024), भारत में केंद्र-राज्य संबंध: कोविड-19 काल के दौरान एक मूल्यांकन, भारतीय लोक प्रशासन जर्नल, अंक-4, खंड-70, पृष्ठ संख्या-1-10
26. शर्मा, मूल राज (2023), समकालीन भारतीय संघवाद की पहचान: बदलती गतिशीलता के साथ केंद्रीकरण की प्रवृत्तियों का संदर्भ, दक्षिण एशिया सर्वेक्षण, अंक-1, खंड-30, पृष्ठ संख्या-1-12